Volume: 3 Issue: 8 Pages: 48-54

उत्तराखंड में स्वामी विवेकानन्द की यात्राओं का वैशिवक संदेश

***[1]गीता और [2]डॉ. प्रकाश लखेडा**

*[1]शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, स्वा0वि0रा0स्नात0 महाविद्यालय, लोहाघाट (चम्पावत), उत्तराखंड, भारत।

[2]राजनीति विज्ञान विभाग, स्वा0वि0रा0स्नात0 महाविद्यालय, लोहाघाट (चम्पावत), उत्तराखंड, भारत।

Article Info.
E-ISSN: 2583-6528
Impact Factor (SJIF): 5.231
Peer Reviewed Journal
Available online:
www.alladvancejournal.com

Received: 04/July/2024
Accepted: 10/Aug/2024

***Corresponding Author**
गीता
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग,
स्वा0वि0रा0स्नात0 महाविद्यालय, लोहाघाट
(चम्पावत), उत्तराखंड, भारत।

सारांश:
उत्तराखण्ड की देवभूमि भारतीय संस्कृति के उद्भव व सम्बर्द्धन में सदा अग्रणी रही है। लगभग प्रत्येक युग में अवतारी पुरूषों, ऋषि मुनियों योगी तपस्वियों व कवि तथा चिंतको को इसने अपनी ओर आकर्षित किया है इसके परिणामतः अनेक महान आत्माओं ने इसे अपनी साधना स्थली बनाकर आध्यात्मिक ऊर्जा से पल्लवित किया है। उन्ही में से एक नाम है स्वामी विवेकानन्द जो भारत की महान वैदिक संस्कृति के युग पुरूष के रूप मे विश्व रंग-मंच पर उदित हुए। उनके भीतर भारत ने अपनी संस्कृति के उन सभी तत्वो का चरम विकास पाया जिसके बल से उन्हें विश्व गुरू होने का गौरव प्राप्त हुआ था। वे भारत के अतीत वर्तमान और भविष्य मे महानायक हैं। उनके जीवन व दर्शन के अध्ययन व अनुपालन से व्यक्ति, समाज राष्ट्र व विश्व को ऊँचा उठने और आगे बढने मे निश्चित रूप बडी सहायता मिलेगी। ऐसे दिव्य पुरूष के पावन स्पर्श से उत्तराखण्ड की देव भूमि पुनः धन्य हुई। उन्होनें इसे ध्यान, चिन्तन के केन्द्र तथा एक तीर्थ के रूप में ग्रहण किया। अपने अल्प मगर प्रखर जीवन में वे पाँच बार उत्तराखण्ड की यात्रा पर आये और लगभग 1 वर्ष की अवधि यहाँ भ्रमण, विश्राम व साधना में व्यतीत किया। प्रथम यात्रा उन्होने 1888 ई0 मे ऋषिकेश की, द्वितीय यात्रा नैनीताल, अल्मोडा, देहरादून की वर्ष 1890 ई0 में तृतीय यात्रा अल्मोडा की वर्ष 1897 ई में चतुर्थ यात्रा फिर अल्मोडा की वर्ष 1898 ई0 में तथा अंतिम पॉचवी यात्रा मायावती आश्रम लोहाघाट की वर्ष 1901 में की थी। 1888 से 1890 ई0 तक उन्होंने परिवाजक के रूप में उत्तराखण्ड सहित पूरे उत्तर भारत की यात्रा की तथा अपने आध्यात्मिक, सामाजिक व शैक्षिक संदेश लोगों तक पहुँचाये। विश्व भम्रण के साथ साथ उन्होने उत्तराखण्ड के अनेक नगरों नैनीताल, अल्मोडा, चम्पावत, कर्णप्रयाग, श्रीनगर, टिहरी, देहरादून, और ऋषिकेश का न केवल भ्रमण किया बल्कि वहाँ लोगों को अपना वैश्विक संदेश पहुँचाया। हिमालय के प्रति स्वामी जी की अगाध श्रृद्धा, प्यार और आर्कषण रहा । यही वजह है कि वे प्रायः हिमालय क्षेत्र में ही रहना पसन्द करते थे। हिमालय के इन दिव्य धवल उच्च शिखरों को देखकर उनका मन मस्तिष्क ऊर्जावान हो उठता था।

मुख्य शब्द: आध्यामिक ऊर्जा, वैदिक संस्कृति, दिव्य पुरूष, पुर्नप्रतिष्ठा

प्रस्तावना:

उक्त शोध-पत्र में उत्तराखण्ड में स्वामी विवेकानन्द की यात्राओं का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है। तथा उनके वैश्विक विचारों व संदेशो का वर्णन किया गया है।

शोध पत्र का उददेश्य: इस शोध पत्र का उदेश्य उत्तराखण्ड में स्वामी विवेकानन्द द्वारा की गई यात्राओ का विस्तार पूर्वक वर्णन करना है।

शोध पत्र की अध्ययन पद्यति: प्रस्तुत शोध पत्र वर्णनात्मक एंव ऐतिहासिक अध्ययन पद्यति पर आधारित है। अतः यहाँ पर द्वितीयक स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है। तथ्यों के संकलन के लिए स्वामी विवेकानन्द पर लिखी गई पुस्तकों, पत्र पत्रिकाओं एंव लेखों की सहायता ली गई।

शोध पत्र की सीमा: स्वामी जी ने उत्तराखण्ड ही नही बल्कि पूरे विश्व का भ्रमण किया था परन्तु शोधार्थी का लक्ष्य केवल स्वामी जी की उत्तराखण्ड में की गई यात्राओं का विस्तार पूर्वक वर्णन तथा स्वामी विवेकानन्द कें वैश्विक विचारो व संदेशो का वर्णन करने तक ही सीमित है।

साहित्य समीक्षा: प्रस्तुत शोध पत्र को लिखने से पूर्व शोधार्थी द्वारा अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया गया जिसके अंतर्गत स्वामी जी के जीवन परिचय व यात्राओं से सम्बधित साहित्य प्राप्त किया । इन सभी साहित्यो में से कुछ का वर्णन इस प्रकार किया जा रहा है-

- विवेकानन्द साहित्य,भाग-5 (2018) स्वामी मुक्तिदानन्द द्वारा प्रकाशित इस खण्ड में स्वामी जी द्वारा अल्मोड़ा में दिये गये भाषणों का वर्णन किया गया है। साथ ही अल्मोड़ा वासियों द्वारा उनका अभिनन्दन का बहुत ही सरल शब्दों में वर्णन किया है। स्वामी जी द्वारा दिया गया भाषण 'वैदिक उपदेशः तात्विक और व्यावहारिक 'का सारांश भी दिया गया है जिसमें उन्होंने मानव-समाज को आध्यात्मिकता की अमूल्य निधि कहा है।
- लाइफ आफ स्वामी विवेकानन्द' (2018) रोमां रोलां द्वारा लिखित इस पुस्तक में इन्होने विवेकानन्ह की जीवनी, उनकी शिक्षा, शिक्षा दर्शन तथा वेदान्त आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। स्वामी जी की पश्चिमी यात्रा तथा अमरीका में हुए सर्वधर्म सम्मेलन में उनका विश्वप्रसिद्ध भाषण का उल्लेख विस्तारपूर्वक किया गया है। स्वामी जी की भारत व यूरोपीय देशों की यात्राओं का वर्णन भी है। रामकृष्ण मिशन की स्थापना, रामकृष्ण मठ की नई व्यवस्था और पत्रिकाओं की स्थापना तथा ये पत्रिकाएँ आगे चलकर मठ के बौद्धिक मुखपत्र और भारत की शिक्षा का कैसे माध्यम बनीं तथा स्वामी विवेकानन्द के महाप्रयाण का विस्तारपूर्वक उल्लेख है।
- 'उतराखण्ड में स्वामी विवेकानन्द' (2015) मोहन सिंह मनराल द्वारा लिखित इस पुस्तक में स्वामी जी कें जीवन परिचय और उनके द्वारा कि गई उत्तराखण्ड की यात्राओं के वर्णन किया गया है। यात्राओं के वर्णन के साथ साथ यहा पर स्थित उनके ध्यान एवं आध्यात्मिक केन्द्रों का वर्णन भी किया है। स्वामी जी द्वारा उत्तराखण्ड की भूमि से जो वैश्विक संदेश लोगों तक पहुँचाया है उन सभी का सविस्तार वर्णन है।
- 'ए बायोग्राफी ऑफ विवेकानन्द' (2005) गौतम घोष की इस पुस्तक में उन्होंने विवेकानन्द की जीवनी और उनकी शिक्षाओं को उत्कृष्ठ ढंग से दर्शाया है। इस पुस्तक में स्वामी जी के जीवन, उनके सिद्धान्तों और मूल्यों के बारे में बताया है। लेखक द्वारा स्वामी विवेकानन्द के एक समृद्ध हिन्दू परिवार में जन्म से लेकर उनके पैगम्बर और आध्यात्मिक नेता बनने तक के जीवन का वर्णन किया गया है। वह एक महान आध्यात्मिक नेता थे जिन्होंने अमेरिका में हिन्दू धर्म और भारतीय संस्कृति की महानता की घोषणा की।

स्वामी विवेकानन्द द्वारा उत्तराखण्ड की पाँच यात्राओ का क्रमश वर्णन: उत्तराखण्ड में स्वामी विवेकानन्द द्वारा की गई यात्राओं का वर्णन एवं वैश्विक संदेश-

1. ऋषिकेश (वर्ष 1888, प्रथम यात्रा)
2. नैनीताल-अल्मोड़ा-देहरादून (वर्ष 1890, द्वितीय यात्रा)
3. अल्मोड़ा (वर्ष 1897, तृतीय यात्रा)
4. अल्मोड़ा (वर्ष 1898, चतुर्थ यात्रा)
5. मायावती (वर्ष 1901, पंचम यात्रा)

इन यात्राओं का विस्तार पूर्वक वर्णन एवं वैश्विक संदेश इस प्रकार है-

1. ऋषिकेश (वर्ष 1888, प्रथम यात्रा)

15 अगस्त 1886 ई0 को स्वामी जी के गुरू श्री रामकृष्ण परमहंस ने महासमाधि ली। श्री रामकृष्ण से प्रेरणा लेकर संन्यासी जीवन बिताने के इच्छुक युवा शिष्यों को अब एक ऐसे स्थान की आवश्यकता थी, जहाँ वे सभी एक साथ रह सके। तारक, लाटू और बड़े गोपाल पहले ही अपने परिवार से नाता तोड़ चुके थे। ठाकुर ने नरेन्द्र को अपने गुरूभाइयों पर निगाह रखने का आदेश दिया था ताकि वे घर न लौट जाएँ। गृही भक्त भी एक ऐसा स्थान चाहते थे जहाँ वे यदा-कदा मिलकर ठाकुर के बारे में चर्चा कर सके। परन्तु प्रश्न यह था कि ये युवक जिस मकान में रहेंगे उसका खर्च कौन वहन करेगा ? उनके आहार तथा जीवन की अन्य मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए क्या व्यवस्था होगी? श्री रामकृष्ण के एक प्रिय शिष्य सुरेन्द्र नाथ मित्र की उदारता से इन सारी समस्याओं का समाधान हो गया। उन्होंनें ठाकुर के निराश्रय संतानों के आश्रय का व्ययभार वहन करने का प्रस्ताव रखा। कलकत्ता और दक्षिणेश्वर के बीच बसे वराहनगर अंचल में किराए पर एक मकान लिया गया युवा भक्त कलकत्ते की भीड़-भाड़ से दूर इस निर्जन भवन में आकर बड़े आनंदित थे। यही स्थान वराहनगरमठ के नाम से रामकृष्ण संघ के संन्यासियों का प्रथम केन्द्र हुआ। कुछ समय वराहनगरमठ में जीवन यापन करने के बाद मठ के संन्यासियों ने संसार त्यागकर दण्ड एवं भिक्षापात्र हाथ में लेकर परिव्राजक जीवन व्यतीत करने की इच्छा नरेन्द्र के सामने रखी। वे तीर्थस्थानों का भ्रमण कर अपने ज्ञान को और अधिक समृद्ध बनाने की इच्छा रखते थे।

इस प्रकार सन् 1888 ई0 के अगस्त माह में स्वामी जी ने एक अज्ञात साधु नरेन्द्र के रूप में उत्तर भारत का भ्रमण शुरू किया। अपनी तीर्थ यात्रा का श्रीगणेश उन्होंने पुण्य तीर्थ वाराणसी से किया। नरेन्द्र चाहते थे कि उनके गुरूभाई अपने पैरों पर खड़े हों। वे खुद भी एकांतवास द्वारा अपना आंतरिक बल देखना चाहते थे। वाराणसी के पश्चात वे लखनऊ गए, फिर आगरा का ताज महल देखने के बाद वृंदावन पहुँचे। यहाँ कुछ दिन व्यतीत करने के पश्चात उनके मन में हिमालय की यात्रा करने की प्रबल इच्छा जागृत हुई। उन्होंने आगे की यात्रा शुरू की।रास्ते में हाथरस में अरुणोदय से पूर्व थकान के कारण एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। हाथरस स्टेशन के स्टेशन मास्टर शरदचंद्र गुप्त अपनी रात्रि की ड्यूटी करके वापस लौट रहे थे तो संन्यासी के तेजस्वी मुखमंडल को देखकर वे पहली नजर में उन पर मुग्ध हो गए। संन्यासी के चरणों में उन्होंने शीष झुकाया और अपने घर चलने का आग्रह किया। नरेन्द्र शरद बाबू के घर चले गए।

भोजन और विश्राम के बाद शरद बाबू ने उनसे आग्रह किया- "महाराज, कई दिनों से आत्मज्ञान प्राप्त करने की मन में इच्छा थी, किन्तु कोई योग्य गुरू नहीं मिला। अब आपने स्वयं दर्शन देकर कृतार्थ किया है तो आत्मज्ञान भी दे दीजिए।" कुछ दिन शरदचंद्र के घर में रह कर नरेन्द्र ने उन्हें अपना शिष्य स्वीकार कर लिया और उन्हें 'आत्मज' के रूप में सम्बोधित किया। साथ ही हाथरस छोड़ने का निश्चय कर लिया। शरदचंद्र से बोले-"वत्स, संन्यासी के लिए एक स्थान पर अधिक दिन टिकना ठीक नहीं है। मेरा इस स्थान को छोड़कर जाना ही श्रेयस्कर होगा।" शरदचंद्र उनसे इतने प्रभावित हुए कि नौकरी से त्याग पत्र देकर साथ जाने को तैयार हो गए और बोले- "आप जहाँ भी जाऐंगे मैं आपके पीछे चलुंगा। आपको मुझे दीक्षा देनी ही होगी।"

माता-पिता की आज्ञा लेकर वे संसार का त्यागकर नरेन्द्र के साथ हिमालय यात्रा पर निकल पड़े। दीक्षा के उपरांत नरेन्द ने उन्हें 'सदानन्द' नाम दिया। यात्रा जारी रही और वे कुछ दिन पश्चात ऋषिकेश पहुँचे। संन्यासी के कठिन व्रत का पालन करते हुए तथा शारीरिक श्रम का अभ्यास न होने के कारण सदानन्द का स्वास्थ्य खराब हो गया। कठोर साधना के कारण वे बहुत कमजोर हो गए और बिस्तर पकड़ लिया। नवदीक्षित शिष्य की हालत को देखते हुए नरेन्द ने वापस लौटने का मन बना लिया और उन्हें साथ लेकर हाथरस लौट आए। हिमालय की यात्रा करने पर उनका स्वप्न अधूरा रह गया जिसे उन्होने भविष्य में पूर्ण करने का संकल्प लिया। स्वामी जी की इस यात्रा का वैश्विक संदेश था अपने गुरूदेव द्वारा निर्दिष्ट त्याग के पथ का अवलम्बन और ईश्वर का साक्षात्कार। स्वामी जी अपने स्वास्थ्य सुधार, शक्ति संचय और अपने गुरूदेव के अधूरे कार्य

को पूर्ण करने की प्रेरणा व धारण के लिए वे यहाँ आये थे। वे बचपन से ही त्याग, वैराग्य व शांति की देव स्थली उत्तराखण्ड में आने का सपना देखते थे।

2. नैनीताल-अल्मोड़ा

देहरादून (वर्ष 1890, द्वितीय यात्रा)-13 मई को बलराम बोस और 23 मई को सुरेन्द्र मिश्रा की मृत्यु हो गई जो श्री रामकृष्ण के शिष्य थे उन दोनों की मृत्यु से स्वामी जी व्यथित हो उठे। इससे उबरने की कोशिश में ध्यान धरणा के साथ महासमाधि का आनन्द लेने की चेष्टा की किन्तु अज्ञान के अंधकार में भारत में प्रचलित कुरीतियाँ तथा ठाकुरों और पुरोहितों के अत्याचारो में पिसते भारतवासियों की चीखें उनके ध्यान में बाधा डालने लगी। उन्हें प्रतीत होने लगा कि उन्हें यह जीवन निर्जन में ध्यान साधना के लिए नहीं, अपितु मानव कल्याण के लिए संघर्ष करने के निमित्त मिला है ।

अब उन्हें वराहनगर मठ की छोटी-छोटी जिम्मेदारियाँ बोझिल लगने लगी और मठ का जीवन उकताहट के साथ बंधन जैसा लगने लगा। उन्होने अनिश्चित काल के लिए मठ के बंधनों को त्याग कर हिमालय की शरण में मनन-चिन्तन करने का निश्चय किया। माँ शारदा देवी से आशीर्वाद लेकर अपने गुरूभाइयों से विदा लेते हुए उन्होंने दृढ़ शब्दों में कहा-"मैं हिमालय की यात्रा पर जा रहा हूँ। जब तक मैं स्पर्श मात्र से लोगों का जीवन परिवर्तित करने की क्षमता प्राप्त न कर लूँ, तब तक मैं लौटूँगा नहीं।"

वर्ष 1890 के जुलाई माह में स्वामी जी ने अपने गुरूभाई स्वामी अखंदानन्द के साथ पुनः हिमालय के लिए पैदल यात्रा प्रारम्भ की। उन्होंने संकल्प लिया कि पूरी यात्रा पैदल ही करेंगे और धन का स्पर्श तक नहीं करेंगे। दंड-कमंडल के साथ पैदल यात्रा करते हुए उन्होंने भोजन के लिए भिक्षा का आश्रय लिया, जो कभी मिलती थी तो कभी नहीं। उन्होंने अनुभव किया कि ऋषि-मुनियों के तप से पवित्र देवाधिदेव महादेव की तपोभूमि देवात्मा उन्हें पुकार रहा है। उत्तराखण्ड की यह यात्रा उनके लिए सहज नहीं थी, किंतु हिमालय के आकर्षण और उसकी दिव्यता की कल्पना मात्र ने मार्ग की उन सभी विघ्न-बाधाओं को उपेक्षित कर दिया। स्वामी जी का कहना था कि हिमालय से मिलना और साक्षात्कार करना मेरी आंतरिक कामना है। कई दिनों की कष्टसाध्य यात्रा के पश्चात जब उन्होंने हिमालय के दर्शन किए तो अभिभूत हो उठे। हिमालय की उत्तुंग को निहारकर उन्हें प्रकृति के विराट स्वरूप के साक्षात दर्शन हुए। हिमालय के मुग्धकारी और प्राकृतिक सौन्दर्य के शांत वातावरण तथा ऋषि-मुनियों के ज्ञान-वैराग्य और भक्तिभाव से भावित यहाँ के पवित्र वायुमंडल ने उनकी समस्त चित्त वृत्तियों को अंतर्मुखी बना दिया। जुलाई 1890 में स्वामी जी अखंदानन्द के साथ नैनीताल पहुँचे। छः दिनों तक वे श्री प्रसन्न भट्ट के घर पर रहे। तत्पश्चात वे आगे अल्मोड़ा की यात्रा के लिए पैदल निकल पड़े। जुलाई 1890 में स्वामी विवेकानन्द अल्मोड़ा के निकट काकड़ीघाट नामक स्थान पर पहुँचे। यह स्थान अल्मोड़ा के मार्ग पर कोसी नदी के किनारे स्थित है। यहाँ पर एक प्राचीन शिव मंदिर है। इस यात्रा के दौरान स्वामी विवेकानन्द और उनके गुरूभाई स्वामी अखंदानन्द जब काकड़ीघाटपहुँचे तो यहाँ की प्राकृतिक सुषमा के दर्शन कर स्वामी जी अत्यन्त भाव-विभोर हो उठे। यहाँ कुछ दूरी पर कोसी नदी के साथ दूसरी ओर से बहकर आ रही सरोता नदी का संगम होता है। संगम स्थल पर दोनों ओर पहाड़ की घाटियों से बहकर आती नदियों के मध्य एक त्रिभुजाकार भूखंड है। मंदिर परिसर में खड़े विशाल पीपल के पेड़ से सरसर बहती हवा और दोनों ओर से नदियों की कल-कल की ध्वनि समस्त वातावरण को दिव्य बना रही थी। उस रात स्वामी विवेकानंद और स्वामी अखंदानन्द ने काकड़ीघाट में ही एक झरने के समीप स्थित पनचक्की (घराट) के निकट रात्रि विश्राम किया।

सुबह स्वामी जी ने स्नान किया और संगम स्थल पर स्थित भूखण्डमें पीपल के वृक्ष के नीचे ध्यान करने बैठ गए। ध्यानावस्था में काफी लम्बे समय तक वे बैठे रहे। यह एक अत्यन्त पवित्र घड़ी थी। यहाँ ध्यानावस्था में ही उन्हें विश्व ब्रह्मांड और अणु ब्रह्मांड का ज्ञान हुआ। उन्हें अणु-परमाणु का ज्ञान हो चुका था। जिस सत्य को पाने के लिए वे हिमालय की इस दुर्गम यात्रा पर निकले थे उन्हें वह लक्ष्य प्राप्त हो गया था। उन्हें यह ज्ञान हासिल हुआ कि विश्व ब्रह्मांड और अणु ब्रह्मांड एक ही नियम से परिचालित होते हैं।

ध्यान मुद्रा से जागने के बाद उन्होंने अपनी आँखें खोली और काफी देर तक हिमालय के शुभ्र गगनचुम्बी शिखरों पर दृष्टि गड़ाए रहे। वे ईश्वर की इस अनुपम रचना और प्रकृति के अगाध सौंदर्य के आगे नतमस्तक हो गए। इसके बाद उन्होंने अपने साथी स्वामी अखंदानंद जी की ओर देखते हुए आनंद विभोर होकर बोले-"देखो अखंदानंद, इस वृक्ष के नीचे एक अत्यंत शुभ मुहूत व्यतीत हो गया। मैंने अभी जीवात्मा और परमात्मा के एक्य का अनुभव किया है।" इसके बाद उन्होंने अपनी नोटबुक निकालकर उसमें अपनी अनुभूति लिखी। उन्होंने बाँग्ला में लिखा-'आमार जीवनेर एकटा मस्त समस्या आमि महाधामें फेले दिये गेलुम।' अर्थात् आज मेरे जीवन की एक बहुत गूढ़ समस्या का समाधान इस महाधाम में प्राप्त हो गया है। उन्होंने आगे लिखा 'जिस प्रकार व्यष्टि जीवात्मा एक चेतन शरीर द्वारा आवृत्त है, उसी प्रकार विश्वात्मा भी चेतनामय प्रकृति अथवा दृश्य जगत में स्थित है।' उन्होंने लिखा-'शिवा(काली) शिव का आलिंगन कर रही है, यह कोई कल्पना नहीं है। इस एक (प्रकृति) द्वारा दूसरे (आत्मा) का आलिंगन' शब्द और अर्थ' के सम्बन्ध की भाँति है। यह दोनों अभिन्न और एक हैं। मात्र मानसिक विश्लेषण द्वारा ही दोनों को पृथक किया जा सकता है।' स्वामी जी ने आगे लिखा-' शब्द के बिना विचार करना असम्भव है। सृष्टि के आदि में शब्द ब्रह्म था विश्वात्मा का यह युगल रूप अनादि है। हम लोग जो कुछ देखते हैं या अनुभव करते हैं, उस सभी की संरचना साकार और निराकार सम्मिलन से हुई हैसम्पूर्ण ब्रह्मांड अणु में समाहित है। सूक्ष्म ब्रह्मांड और स्थूल ब्रह्मांड ठीक उसी तरह से एक ही पटल पर अवस्थित हैं जैसे शरीर और शरीर के अंदर आत्मा।

इसी अद्वैत दर्शन के आधार पर उन्होंने वैश्विक संदेश दिया कि को समझाया कि मनुष्य की महानता उसकी उन सत्य प्रवृत्तियों को चरितार्थ करने में है, जिसमें दूसरों को प्रकाश मिले और उनका हित हो। यही ज्ञान और दर्शन बाद में बाद शिकागो में आयोजित धर्म सम्मेलन में स्वामी जी के संबोधन का आधार बना।

काकड़ीघाट की दिव्य अनुभूति के बाद स्वामी जी ने अपने गत्तव्य का अगला पड़ाव अल्मोड़ा की ओर प्रस्थान किया।अल्मोड़ा से 3 किमी0 पूर्व ही करबला के पास स्थित एक कब्रिस्तान के निकट सीधी चढ़ाई और भूख-प्यास से परेशान स्वामी जी वहीं पर अर्द्धमूर्छित हो गए। उनका शरीर असन्न होकर एक पत्थर के ऊपर धराशाही हो गया। उनकी इस हालत को देखकर गुरूभाई अखंदानंद पानी की तलाश में दौड़ पड़े मगर तभी ईश्वरीय सहायता स्वयं उनके पास चलकर आ खड़ी हुई। उस कब्रिस्तान के निकट एक झोपड़ी में निवास करने वाले मुस्लिम फकीर जुल्फिकार अली की नजर स्वामी जी पर पड़ी जो एक ककड़ी लेकर सहायता के लिए आगे आये। स्वामी जी ने अपनी अवस्था को देख उससे अनुरोध किया कि वह उस ककड़ी को तोड़कर उनके मुँह में ड़ाल दे। मगर जातीय संकोच के कारण वह शीघ्र ऐसा नहीं कर सके। तबस्वामी जी ने उनसे कहा, "तो इसमें क्या हुआ ? क्या हम सब भाई नहीं? "स्वामी जी के इस पेरम व भाईचारे के भावों से ओत-प्रोत शब्दों से उनका संकोच जाता रहा और वे अपना कर्तव्य पूरा कर सदा-सदा के लिए धन्य हो गये।

सात वर्ष बाद जब 1897 ई0 में वे अपनी शिकागो यात्रा के बाद विश्वप्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द के रूप में पुनः अल्मोड़ा आए तो हजारों की संख्या में नगरवासी उनके स्वागत के लिए खड़े थे। शिकागो में दिए वक्तव्य के बाद भारत में उनकी प्रसिद्धि फैल गई

थी। जब वे अल्मोड़ा पहुँचे तो वहाँ के लोगों द्वारा उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। नगर की सीमा के बाहर ही पाँच हजार से अधिक लोगों द्वारा उनका स्वागत किया गया और उन्हें जुलूस के रूप में नगर तक लाया गया। स्वागत के लिए आई भीड़ में स्वामी जी ने उस मुस्लिम फकीर को दूर से ही पहचान लिया। भारी जनसमूह के बीच ही वे उस फकीर को मिलने गए और मंच पर लाकर उसे धन्यवाद दिया। फिर स्वागत मंच से लोगों को बताया-इन्होंने मेरे प्राण बचाए थे। मैं जीवन में कभी भी इतना श्रमित नहीं हुआ था। करबला में वर्तमान समय में उस स्थान को स्वामी विवेकानन्द स्मारक विश्राम गृह का स्वरूप दिया गया, ताकि पैदल आने-जाने वाले लोग यहाँ पर क्षणिक विश्राम कर सकें। इस घटना से पूरे विश्व को यह संदेश मिलता है कि सभी मनुष्य जाति एक समान है। कोई छोटा या बड़ा नहीं है। सभी धर्म समान हैं इसलिए सभी लोगों को समाज में भाई-चारे के साथ रहना चाहिए तथा सभी के दुःख-सुख में मिलजुलकर एक साथ प्रेम-भाव बनाये रखना चाहिए, हम सभी को उनके इन सामाजिक कार्यों को आत्मसात करना चाहिए।

अल्मोडा की इस प्रथम यात्रा में कसारदेवी की तपस्या स्वामी जी के जीवन की महत्वपूर्ण घटना रही। इसी पहाडी की एक गुफा मेंवैराग्य से दीप्त सत्य के चरम साक्षात्कार के संकल्प से ओतप्रोत स्वामी विवेकानन्द कई दिनों तक भूखे प्यासे तपस्या में निरत रहे उनका यह प्रयास आध्यात्मिक अनुभूतियों की ऊँचाईयो को छू लेने के लिये था। आज इस पवित्र भुखण्ड के पृष्ठ प्रदेश में श्री शारदा मठ की एक शाखा खुल गयी है। अप्रैल 1998 ई0 से यह स्थल पुनः साधना व निःस्वार्थ कर्म का स्थल बन गया है जिसका अनुभव यहाँ स्वामी जी को हुआ था इसे स्वामी जी भावो का विस्तार ही कहा जा सकता है। स्वामी जी की इस यात्रा का वैश्विक संदेश यह था कि भारत व समस्त विश्व में वेदांत के उन सत्यों को व्यावहारिक रूप प्रदान करना जो आज तक गिरी कन्दराओं की सम्पत्ति बनकर रह गये थे, साथ ही कर्म व सेवा के अभिनव रूप में धर्म व दर्शन के आलौकिक समन्वय का संकल्प करना।

अल्मोडा पहुँचकर स्वामी जी को अपने बहन की आत्महत्या का समाचार प्राप्त हुआ। स्वामी जी का कोमल हदय करूणा से भर उठा । भारतीय समाज में नारी की ऐसी दयनीय दशा के प्रति उन्होन मन-ही मन मन संघर्ष का संकल्प किया मगर इस समय इस घटना ने उन्हे अल्मोडा छोड देने के लिए बाध्य कर दिया और वे हिमालय की ऊँचाईयो व निर्जनता में साधनानिरत होने चल पडे । 5 सितम्बर 1890 ई0 को स्वामी जी ने अल्मोडा से बद्री नारायणकी ओर यात्रा शुरू की उनके साथ गुरूभाई शारदानन्द, अखण्डानन्द और कृपानन्द तथा सामान ढोने वाला एक कुली भी था इस तरह स्वामी जी उत्तराखण्ड के गढवाल प्रदेश में पँहुचते है जहाँ पर वे एक माह तक पवित्र अलकनन्दा नदी के तट पर तपस्यानिरत रहे। मार्ग की बाधाओं व गुरूभाई की अस्वस्थता के कारण वे बद्रिकाश्रम जाने का संकल्प त्याग कर अलकनन्दा के तट की ओर मुड जाते हैं। रूद्रप्रयाग व श्रीनगर के बाद वे देहरादून और ऋषिकेश में तपस्या करते हैं। जो उनकी इस महत्वपूर्ण यात्रा का अंतिम पडाव होता है।

उत्तराखण्ड की इस तपस्या के बाद ही वे भारत के मैदानो की ओर अग्रसर होते है जहाँ उन्हें पश्चिमी देशो मे जाने की प्ररेणा मिलती है बद्रिकाश्रम में तपस्या व एकान्तवास हेतु स्वामी जी ने सोमेश्वर की घाटी से पैदल गढवाल हिमालय में स्थित कर्णप्रयाग की ओर प्रस्थान किया कर्णप्रयाग पहुँचकर उन्होने देखा की उनके सामने अनेक बाधाऐं आ खडी हुई है।पहली बाधा थी उनके प्रिय गुरूभ्राता स्वामी अखण्डानन्द का स्वास्थ्य जो ब्राकाइरिस के बढ जाने पर खाँसते-खाँसते चल रहे थे उनके लिए इससे अधिक ऊँचाई पर जाना सम्भव नहीं था। दूसरी बाधा थी उस इलाके में दुर्गिक्ष के प्रकोप होने से सरकार द्वारा केदार बद्री मार्ग को बन्द कर देना ।तीन दिन कर्णप्रयाग में रूकने पर भी यात्रियों के लिए मार्ग खुलने के कोई आसार नजर नही आ रहे थे तब उन्हे बद्रिकाश्रम के दर्शन व तपस्या के संकल्प से विरत होना पढा और वे रूद्ररप्रयाग की ओर मुड गये । रूद्रप्रयाग पहुँचने से पूर्व स्वयं स्वामी जी ज्वरग्रस्त हो गये और उन्हे सलडगाड चटटी में रूकना पडा। इस प्रकार स्वामी अखण्डानन्द के ब्राकाइटिस के कारण डॉक्टरों ने उन्हें मैंदानी भाग में चले जाने की सलाह दी। स्वामी जी के लिए उन्हें लेकर देहरादून आने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा। और वे अक्टूबर 1890 ई0 में इस तपोभूमि से नीचे उतर आये और सभी लोग बीमार अखण्डानन्द के साथ देहरादून की ओर चल पड़े। स्वामी जी यहाँ दो बार आये प्रथम 1890 ई0 व दूसरी बार 1897 ई0 मे। कुल मिलाकर लगभग एक माह का समय उन्होंने यहाँ बिताया ।

3. अल्मोडा (वर्ष 1897 तृतीय यात्रा)

मद्रास मे उन्होंने सन् 1893ई0 में शिकागो में आयोजित होने वाले विश्व धर्म सम्मेलन के विषय में सुना और मद्रास के युवकों ने उनकी अमेरिका यात्रा के लिए धन एकत्र कर लिया । अमेरिका जाने की अपनी योजना की सूचना उन्होने सिर्फ सारदा माँ को दी और उन्हे माँ का आशीर्वाद प्राप्त हो गया। इसके बाद वे अपनी ओजस्वी वाणी से विश्व धर्म सम्मेलन सभा को आश्चय चकित कर देने वाले जगत विख्यात स्वामी विवेकानन्द के रूप मे सामने आए। विवेकानन्द अमेरिका और यूरोप की यात्रा से जनवरी 1897ई0 में वापिस लौटे। उनके साथ उनके अंग्रेज शिष्य जे0 जे0 गुडविन भी आए। गुडविन एक निपूर्ण स्टेनोग्राफर थे और स्वामी जी से उनकी भेट न्यूयार्क में हुई थी। दूसरे एक अंग्रेज दंपति कैप्टन सेवियर और श्रीमती सेवियर जो लन्दन से स्वामी जी के निष्ठावान अनुयायी बन गये थे। स्वामी जी के साथ भारत आये। स्वामी जी के हदय में हिमालय में एक अद्वैत आश्रम बनाने की कल्पना थी, जिसे पहली बार उन्होनें स्विट्जरलैण्ड में सेवियर दंपति के सामने व्यक्त किया था। इसी कल्पना को साकार रूप देने के लिए वे दिनों भारत आए थे। अपने अभावग्रस्त देश के लिए विदेशों से धन एकत्रित करने और परिचम में वेदों का प्रचार करने के दोहरे उददेश्य से स्वामी जी ने शिक्षण और भाषण का जो कठोर परिश्रम किया।उससे उनका स्वास्थ्य गिरने लगा था । विदेश से लौटने के बाद कलकत्ता और श्रीलंका में अपार जनसमूह द्वारा आयोजित स्वागत समारोहों, सभाओं में दिये गये भाषणों असंख्य व्यक्तियों से होने वाली व्यक्तिगत भेटो ने स्वामी जी को और भी थका दिया था। वे विश्राम के लिए शीघ्र ही अल्मोडा जाना चाहते थे किन्तु बंगाल में उंन्हे दो महान कार्य करने अनिवार्य प्रतीत हुए। पहला था अपने देश के निर्धन, पददलित एंव अभावग्रस्त लोगो की सेवा के लिए रामकृष्ण मिशन की स्थापना करना और दूसरा था बंगाल के कई जिलों में तेजी से फैलते हुए दुर्भिक्ष के लिए संन्यासियों द्वारा सेवा-कार्य की योजना बनाना ।

अपने शिष्यों और गुरूभाइयों के लिए उनका अनुप्राणित करने वाला यह आदेश था कि वे दुसरों के सुख के लिए अपनी मुक्ति को भूल जाएँ। अन्त में इन्होनें 6 मई 1897 ई0 को डॉक्टर के विशेष आग्रह पर विश्राम व स्वास्थय लाभ हेतु कलकत्ता से अल्मोडा के लिए प्रस्थान किया । इनके साथ कुछ शिष्य और उनके गुरूभाई स्वामी योगानन्द भी चल पडे। गुडविन और एक अन्य अंग्रेज अनुयायी मिस मूलर उनसे पहले ही चल पडे थे।एक दिन लखनऊ विश्राम के बाद 9 मई को वे काठगोदाम पहुँचे। जहाँ गुडविन कुछ अन्य भक्तों के साथ उन्हें लेने आये थे 11 मई को स्वामी जी अल्मोडा पहुंचे जहाँ उनका स्वागत हुआ स्वामी जी को एक सुन्दर सुसज्जित घोडे पर बिठा दिया। यह विजयी शोभायात्रा बाजार की ओर चली,जहाँ तीन हजार व्यक्ति स्वामी जी के अभिनन्दन के लिए एकत्रित थे पूरे मार्ग में छतों पर चढी हुई स्त्रियाँ पुष्पों और अक्षतों की वृष्टि कर रही थी। बद्रीशाह के घर के सामने सडक पर झंडियाँ बाँधकर पंडाल बनाया गया था और रात में पूरे नगर में बडे त्यौहार की तरह दीपमाला जलाई गई।

समारोह में कुल तीन अभिनन्दन पत्र पढे गए।एक संस्कृत में और दो अंग्रेजी में । समयाभाव के कारण स्वामी जी ने अंग्रेजी में इनका संक्षिप्त,परन्तु भावपूर्ण उत्तर दिया । उन्होने हिमालय को अपने पूर्वजों की स्वप्नस्थली बताते हुऐ कहा भारत का प्रत्येक जिज्ञासु व्यक्ति अपने नाशवान जीवन के अंतिम अध्याय की पूर्ति के लिए इस पवित्र स्थान में आना चाहता है। यही वह स्थान है जिसका स्वप्न मै बाल्यकाल से देखा करता था। यद्यपि तब उचित समय न आया था मुझे कार्य करना था और किसी अज्ञात प्रेरणा से मैं इस पवित्र स्थान को छोडने पर बाध्य हो जाता था तथापि मैने बार-बार यह चेष्टा की कि मैं सदा यहाँ रहूँ। अब मेरी हार्दिक आशा और प्रार्थना है और मुझे विश्वास भी है कि मेरे जीने के अन्तिम दिन संसार के अन्य स्थानों की अपेक्षा इसी पवित्र स्थान मे व्यतीत हो। स्वामी जी ने यहाँ से वैश्विक संदेश दिया कि यह हिमालय त्याग का प्रतीक है। हमारे पूर्वज जीवन के अन्तिम चरण में इसकी गोद में आने के लिए लालायित रहते थे और जब मानव जाति जातीय भेदभाव एंव मत-मतान्तरों के बाहय आडम्बर को छोडकर यह जान लेगी कि शाश्वत धर्म एक ही है और वह है आत्म-साक्षात्कार तथा शेष सब मिथ्या है और भगवद् भक्ति के अतिरिक्त यहाँ सब कुछ वृथा है। अतैव यहाँ ऐसे केन्द्र की स्थापना होनी चाहिऐं जहाँ न केवल क्रियाशीलता अपितु इससे भी बढकर निश्चलता एंव ध्यनोपासना कि व्यवस्था हो और मुझे आशा है कि मैं ऐसा कर सकूँगा।

इस बार स्वामी जी अल्मोडा में अपने पुराने मित्र बद्रीशाह के यहाँढाई माह तक रहे। किन्तु उनके हृदय में अभी भी कभी-कभी यह विचार आता था कि अल्मोडा भी यथोचित दूरी पर अथवा पूर्ण शान्तिमय नहीं है। दो बार वे लगभग बीस मील उत्तर में स्थित देवलधार स्टेट में चले गऐ। वहाँउन्होने अश्वारोहण किया और वहाँ की सुन्दर जलवायु तथा मनोरम दृश्यों, विशेषकर, हिम शिखरों के पीछे सूर्योदय का आनन्द प्राप्त किया। धीरे-धीरे उनका स्वास्थ्य सुधरने लगा और उन्होंने कलकत्ता में अपने डॉक्टर को लिखा कि बाल्यकाल के बाद उन्होंने अपने को इतना स्वस्थ्य कभी अनुभव नही किया था। इसमें सन्देह नही कि उनके इस स्वास्थ्य सुधार में मिस मूलर जिन्होंने स्वामी जी को यूरोपियन रीति से दिन मे तीन बार भोजन कराने का दायित्व लिया था, विशेष सहायक हुई किन्तु स्वामी जी उनके समय से अधिक, जैसे इनके स्वास्थ्य परमआवश्यक था, विश्राम करने के लिए राजी नहीं हुए ।

उन्होंने जुलाई के अन्त तक अल्मोडा छोडने की तैयारी कर ली थी। अल्मोडा से जाने से पहले वहाँ के अंग्रेज निवासियों ने स्वामी जी को अपने क्लब में भाषण देने के लिए बुलाया। उन्होंने अपने भाषण का विषय रखा था ''आत्म सम्बन्धी प्रश्नों के सामाधान के लिए पूर्व और पश्चिम के भिन्न मार्ग '' पाश्चात्य रीति प्रकृति में इसका समाधान ढूढँती है किन्तु प्राच्य विधि बाह्य जगत से निराश होकर अन्तर में इसकी खोज करती है। उन्होने राजकीय इण्टर कॉलेज अल्मोडा में भी दो भाषण दिये । वहाँ की जनता के अनुरोध पर पहली बार हिन्दी मे वार्ता की जिसका विषय था'' वेदों की शिक्षा के सिद्धान्त और आचरण'' अन्त में वे 2 अगस्त1897 ई0 को अपनी दूसरी अल्मोडा यात्रा, जो उनकी सबसे दीर्घ प्रवास के रूप में जानी जाती है, को समाप्त कर बरेली के लिए चल पडे।इस प्रवास के 81 दिन बहुत महत्वपूर्ण है। जो इस देवभूमि के आध्यात्मिक वातावरण को दीर्घकाल के लिएं ऊर्जामय बना गये।

4. अल्मोडा (वर्ष 1898, चतुर्थ यात्रा)

स्वामी विवेकानन्द के आहवाहन पर इनकी पश्चिमी देशों की शिष्याएं भारत के लिए स्वंय को समर्पित करने कें उदेश्य से भारत आने लगी जनवरी 1897 ई0 को इंग्लैण्ड से मारग्रेट नोबल कलकत्ता पहुँचीजो भगिनी निवेदिता के रूप में विख्यात हुई ।14 फरवरी 1898 ई0 को कु0 मैकलाइड अमेरिका से भारत पहुँची इनके साथ श्रीमती ओली बुल वकु0 मूलर भी भारत में कार्य की इच्छुक थी अब स्वामी जी के कन्धों पर इन्हें यथार्थ भारत से परिचित कराने का उत्तरदायित्व आ गया । बेलूड लौटते ही 1898 ई0 के प्रारम्भ में ही इनका प्रशिक्षण शुरू कर दिया। स्वामी जी ने मारग्रेट को श्री राम कृष्ण सहधर्मिणी शक्तिरूपा श्री माँ शारदा से मिलवाया । पूज्यनीय श्री माँ ने उन्हें अपनी नन्ही बच्ची के रूप मे स्वीकार किया और स्वामी जी के विश्वास हो गया कि अब भारत उसे अवश्य स्वीकार करेगा । उन्होने मारग्रेट को दीक्षा देकर भारत माँ की सेवा में निवेदित कर दिया ।इस प्रकार वह मारग्रेट नोबल से भगिनी निवेदिता बनी जिसे स्वामी जी ने इंग्लैण्ड की भारत को देन कहाँ। वह एक सच्ची सिंहनी थी और स्वामी जी की सिंह गर्जना ने उसे विचलित कर दिया था उसने अपने गुरूदेव के आमंत्रण को स्वीकार कर उनके कार्य हेतु स्वंय को पूरी तरह निवेदित कर अपना नाम सार्थक कर दिखाया। स्वामी जी ने दार्जिलिंग से आकर अपनी शिष्याओं कें साथ उत्तराखण्ड की एक और यात्रा पर जाने का निश्चय किया इस यात्रा का उदेश्य अपनी पाश्चात्य शिष्याओं को यथार्थ भारत से परिचित कराना जिसके वे स्वंय ही लघु रूप थे। एक अन्य लक्ष्य था अपने हिमालय मठ की प्रतिष्ठा करना जिसके लिए उनके अंग्रेज शिष्य दम्पत्ति श्री एंव श्रीमती सेवियर भारत आये थेजो इस वक्त अल्मोडा में रह रहे थे इसके अलावा मैदानी इलाके की गर्मी से बचने का यह आदर्श अवसर था जहाँ शिक्षण प्रशिक्षण को ठीक तरह से अंजाम दिया जा सकता था। इस प्रकार स्वामी जी कीयह बहुउद्देशीय उत्तराखण्ड यात्रा का शुभारम्भ मई 1898 ई0 में हुआ । स्वामी जी के साथ इस यात्रा पर आने वाले प्रमुख थे गुरूभाई स्वामी तुरीयानन्द व स्वामी निरंजानन्द उनके शिष्य स्वामी सदानन्द व स्वरूपानन्द,पाश्चात्य शिष्याओं में श्रीमती ओली बुल, कु0 मैकलाउड, कु0 मूलर,सिस्टर निवेदिता तथा श्रीमती पैटरसन थी।

11 मई 1898 ई0 को स्वामी जीने अपने टोली के साथ हावडा स्टेशन से रेल द्वारा उत्तराखण्ड की तीसरी यात्रा का श्री गणेश किया । 13मई को वे काठगोदाम पहुँचे जहाँ से उत्तराखण्ड के लिए ऊँची पहाडियों के मार्ग की शुरूआत की, मैदानी भाग के इस भ्रमण के बीच रेल से जिन जिन स्थानों को उन्होनें देखा,उनके बारे मे स्वामी जी ने अपने नवागन्तुकों को विषद ऐतिहासिक, सांस्कृतिक जाँनकारिया दी और घटनाओं को जीवंत कर प्रस्तुत किया। इस बीच स्वामी जी नैनीताल में तीन दिन रूकें फिर 16 मई को अपराहन में अल्मोडा के लिए प्रस्थान किया। इस प्रकार स्वामी जी की टोली ने उत्तराखण्ड के वन प्रदेश में प्रवास करते हुए। तथा रात्रियापन के उपरान्त 17 मई को अल्मोडा से तीसरा प्रवास शुरू किया । अल्मोडा में उन्होनें बद्रीशाह का थॉमसन भवन नामक मकान, जो पहाडी के पश्चिमी छोर पर था किराये पर ले लिया । वे अभी भी प्रस्तावित अद्वैत आश्रम के लिए उचित स्थान के प्रश्न पर विचार कर रहे थे विवेकानन्द तथा उनके गुरूभाइयों ने थॉमसन भवन में से सेवियर दम्पति का आतिथ्य ग्रहण किया तथा पाश्चात्य मित्रों और स्वामी जी के शिष्यो ने 'ओकलेभवन' में निवास किया, स्वामीजी ने इन पाश्चात्य अनुयायियों के प्रशिक्षण का कामअपने हाथ में लिया।इनके चेष्टा थी कि वे इनके हदय से कल्पित भ्रमपूर्ण संस्कारों को दूर करके उन्हें भारत के इतिहास, पुराण, रीति-रिवाज और यहाँ की मान्यताओं का ठीक-ठीक ज्ञान करा दे। एक दिन भारतीय थियोसॉफिकल सोसायटी की श्रीमती ऐनी बेसेन्ट को थॉमसन भवन में चाय पर आमंत्रित किया गया। एक अन्य अवसर पर बंगाली संत देशभक्त अश्विनी दत्त ने स्वामी जी को घोड़े पर जाते हुए देखा। उनका कई वर्ष पहले नरेन्द्र के रूप में स्वामी जी से परिचय हुआ था।

उनके हदय में अब भी यदा-कदा एकांतवास की इच्छा प्रबल हो उठती थी। ऐसे ही एक अवसर पर वे अल्मोड़ा के पश्चिम में कुछ दूर एक अन्य शिखर पर स्थित स्याही देवी के लिये चल पड़े। वहाँ वे तीन दिन तक रहे। वहाँ भी लोगों ने उनका पीछा नहीं छोड़ा, इसलिए उन्हें

लौटना पड़ा, किन्तु उन्हें एक मूल्यवान अनुभव हुआ उन्होंने बताया कि अब भी वे पश्चिम के संसर्ग से अप्रभावित भारत की प्राचीन परम्परा के संन्यासी हैं, जो नंगे पाँव रहकर शीत और ग्रीष्म को सहन कर सकते हैं तथा अल्पाहार पर निर्वाह कर सकते हैं। अल्मोड़ा आने पर उन्हें एक नया आघात पहुँचा कि दक्षिणी भारत के ऊँटकमंड में स्वामीभक्त गुडविन की मृत्यु हो गई। उन्होंने अपने शिष्य और मित्र के प्रति भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा, "उसके उपकार से मैं कभी उऋण नहीं हो सकता। जिन लोगों को मेरे विचारों से किंचित भी प्रेरणा प्राप्त हुई है, उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि इसका प्रत्येक शब्द श्री गुडविन के अथक एवं परम निस्वार्थ परिश्रम के कारण ही प्रकाशित हो पाया है।"

प्रस्थान का समय आने पर स्वामी जी ने अपने पाश्चात्य शिष्यों के साथ कश्मीर जाने का निश्चय किया। 11 जून 1898 ई0 को अन्तिम बार अल्मोड़ा छोड़ने से पहले स्वामी जी ने एक महत्वपूर्ण कार्य किया। मद्रास से प्रकाशित होने वाली अंग्रेजी पत्रिका 'प्रबुद्ध भारत' के सम्पादक की अचानक मृत्यु हो गई। अतः पत्रिका को फिर से अल्मोड़ा से प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया। इसके नये सम्पादक स्वामी जी के युवा शिष्य स्वामी स्वरूपानन्द तथा कैप्टन सेवियर ने हैंड प्रेस तथा कागज आदि का व्यय वहन करने का निश्चय किया। सन् 1899 ई0 में प्रकाशन केन्द्र पूर्णतः मायावती को स्थानान्तरित किया गया। कैप्टन सेवियर इस पत्रिका के व्यवस्थापक भी रहे। फरवरी 1899 ई0 तक पत्रिका का प्रकाशन होने लगा। हिमालय की गोद में स्थित चम्पावत जिले के लोहाघाट के पास स्थित मायावती नामक स्थान का चुनाव स्वामी स्वरूपानन्द और सेवियर दम्पत्ति द्वारा किया गया था। इस प्रकार अल्मोड़ा आज भी एकान्त और ध्यान साधना के लिए सर्वथा उपयुक्त स्थान बना हुआ है। इस यात्रा के दौरान स्वामी का वैश्विक संदेश अपने विदेशी शिष्यों को वेदान्त और भारतीय दर्शनों का ज्ञान कराना था। वेदान्त के शक्तिशाली विचारों के लिए वैज्ञानिक आविष्कारों व भौतिक सुख-समृद्धि की जननी पाश्चात्य भूमि को उपयुक्त मानकर भी स्वामी जी यह बात अच्छी तरह जानते थे कि उनका वास्तविक मूल्यांकन भारत ही कर सकता है।

5. मायावती (वर्ष 1901, पंचम यात्रा)

अमेरिका से भारत लौटते समय, जब स्वामी जी लन्दन में ठहरे हुए थे, तो उनके कुछ अनुरागियों-कप्तान तथा श्रीमती सेवियर और मिस हेनरिएटा मूलर ने उनके लिए स्विट्जरलैंण्ड में छुट्टियाँ बिताने की योजना बनाई और स्वयं भी उनके साथ जाने का निश्चय किया। स्विट्जरलैंण्ड और आल्पस की यात्रा का प्रस्ताव सुनकर स्वामी जी बहुत खुश हुए। वहाँ के पहाड़ी क्षेत्र के लोगों को देखकर स्वामी जी के मन में हिमालय के बीच एक मठ बनाने की इच्छा प्रबल हो उठी। इसके बाद उन्होने अल्मोडा के लाला बद्रीशाह को कुछ जमीन खरीदेने कि इच्छा व्यक्त करते हुये लिखा। मैं अल्मोडा में या बल्कि अल्मोडा के पास के किसी स्थान में एक मठ स्थापित करना चाहता हूँ। क्या आप अल्मोड़ा के समीप उद्यान आदि से युक्त कोई ऐसा उपयुक्त स्थान जानते है, जहाँ मैं अपना मठ बना सकूँ ? बल्कि मैं तो एक पूरी पहाड़ी ही प्राप्त करना चाहूँगा।"

धीरे-धीरे उनकी पूरी योजना ने साकार रूप धारण किया। लाला बद्रीशाह को एक अन्य पत्र में लिखा-"मेरे साथ मेरे तीन अंग्रेज मित्र है, आप जानते ही होंगे कि ये मेरे शिष्य है और हिमालय में मेरे लिए एक मठ का निर्माण करना चाहते हैं। हमें अपने लिए एक ऐसी पूरी पहाड़ी चाहिए, जहाँ से हिम-शिखर दिखते हों।" उन्होंने फिर लिखा-"हमारा हिमालय का आश्रम करीब 7000 फीट ऊँची एक ऐसी समूची पहाड़ी पर स्थापित होगा, जो गर्मियों में शीतल और जाड़ों में खूब ठण्डा होगा। कप्तान तथा श्रीमती सेवियर वहीं रहेंगे और वह यूरोपीय कार्यकर्ताओं का केन्द्र होगा, क्योंकि हित्रक मैं उन लोगों पर भारतीय जीवन-शैली थोपकर, यहाँ के गरम मैदानी अंचल में रखकर उन्हें मारना नहीं चाहता। मेरी योजना है कि बहुत से हिन्दू युवकों को हर सभ्य देश में वेदान्त का प्रचार करने भेजूँ और अन्य देशों से नर-नारियों को लाकर भारत की उन्नति के कार्य में लगाऊँ। यह आदान-प्रदान अति उत्तम होगा।"

कुछ साल बाद 27 दिसम्बर 1899 ई0 को स्वामी जी ने लॉस एंजिल्स से भगिनी क्रिस्टिन को हिमालय में जाकर अवकाश लेने की अपनी इच्छा के बारे में लिखा-"वहाँ पानी के कुछ झरने और एक छोटा-सा सरोवर होगा। उसमें देवदार के जंगल होंगे और सर्वत्र फूल-ही-फूल खिल रहे होंगे। उनके मध्य मेरी एक छोटी सी कुटिया होगी, बीच में शाक-सब्जियों का उद्यान होगा जिसमें में स्वयं काम करूँगा और साथ में मेरी किताबें होगी और कभी कभार ही में किसी मनुष्य का चेहरा देखूँगा । यदि पृथ्वी मेरे निकट से ध्वंस को भी प्राप्त हो तो में परवाह नही करूँगा तब तक मैं अपना सारा जागतिक तथा आध्यामित्क कार्य सम्पन्न कर चुका होऊगा और अवकाश ले लूगा अहा। सारे जीवन मुझे जरा भी विश्राम नहीं मिला । जन्म से ही मैं एक खानबदोश बंजारा रहा हूँ। जब स्वामी जी ने यह पत्र लिखा तब तक मायावती का आश्रम एक साकार रूप धारण कर चुका था वैसे अब तक उन्होंने इसे देखा नही था परन्तु स्वामी जी ने जैसी कल्पना की भी वह ठीक वैसा ही रूपायित हुआ था।मायावती आश्रम में स्वामी विवेकानन्द का पर्दापर्ण 3 जनवरी 1901 ई0 को हुआ था। तब स्वामी जी काठगोदाम से देवीधूरा होते हुये लगभग 173 कि0मी0 की दुर्गम पैदल यात्रा कर अपने अनुयायियों के साथ मायावती पहुँचे थे।

स्वामी जी कि इच्छा थी कि हिमालय का मठ पूरी तौर से अद्वैत भाव को समर्पित हो परन्तु अपनी इसी निवास के दौरान उन्होनें देखा कि उनकी इच्छा के विपरीत वहाँ श्री रामकृष्ण के पूजन हेतु एक छोटा सा मंदिर स्थापित हो चुका है इसके लिए उन्होंने स्वामी स्वरूपानन्द और मदर सेवियर दोनों को खूब खरी खोटी सुनाई परन्तु स्पष्ट रूप से यह नहीं कहा कि मंदिर को उठा दिया जाए।फिर भी यह मंदिर 18 मार्च 1902 ई0 को बन्द कर दिया गया था। स्वामी विमलानन्द का झुकाव द्वैतवाद की ओर था। अतः उनके मन में तब भी शंका थी कि क्या उनके लिए अद्वैत आश्रम की विचार धारा को अपना ले ना उचित होगा । इस विषय में उन्होनें श्री माँ सारदा देवी को एक पत्र लिखा । 7 सितम्बर 1902 ई0को उन्हें जय रामबाटी से श्री माँ का यह उत्तर मिला "हमारे गुरूदेव (श्री राम कृष्ण) अद्वैत है। और उनके शिष्य होने कारण तुम सभी अद्वैती हो। मैं जोर देकर कह रही हूँ। कि तुम लोग निश्चित रूप से अद्वैतवादी हो।"

स्वामी स्वरूपानन्द अद्वैत आश्रम के संस्थापक अध्यक्ष होने के साथ ही ''प्रबुद्ध-भारत'' के पहले संन्यासी सम्पादक भी थे। अद्वैत के बारे में स्वामी जी ने और भी स्पष्ट रूप से आश्रम के परिचय पत्र मे निम्न विचार सम्मिलित करवाये। ''अद्वैत ही एकमात्र ऐसा दर्शन है जो मनुष्य को उसके अपनत्व की पूर्ण उपलब्धि कराता है।अपना स्वामी बना देता है सारी परधीनता तथा इससे सम्बद्व अंधविश्वास को उतार फंेकता है और इस प्रकार हमें सभी प्रकार के कष्ट सहने तथा कर्म करने में सक्षम बनाता है और अंततः परम मुक्ति की उपलब्धि करा देता है ''स्वामी जी को आशा थी कि अद्वैत दर्शन को यहाँ समस्त अंधविश्वासों तथा दुर्बलताजनक प्रभावों से मुक्त रखा जा सकता है यहाँ पर केवल शुद्व एंव सरल अद्वैत सिद्वान्त के अतिरक्ति और किसी प्रकार की शिक्षा नहीं दी जायेगी और न साधन किया जायेगा । अन्य सभी धर्ममंतो के साथ हमारी पूर्ण सहानूभति होते हुये भी यह अद्वैत आश्रम केवल अद्वैत भाव को ही समर्पित होगा। इस प्रकार इस यात्रा से स्वामी जी ने सभी की अद्वैतवादी बनने का वैश्विक सन्देश पूरे विश्व में फैलाया।

निष्कर्ष-इस प्रकार स्वामी जी की उत्तराखण्ड यात्राओं का समापन हो गया । स्वामी जी की यात्राओं का उददेश्य तप,साधना, एंव ध्यान हिमालय के शक्ति पुंज से नई ऊर्जा प्राप्त करना रहा था। स्वामी जी जब 24 जनवरी को बेलूड पहुँचे तो उन्होनें अपने गुरू भ्राताओं को

उत्तराखण्ड के बारे में मनोरम प्रसंग व कहानियाँ सुनाई । उन्होंने खेद जताया कि ऐसे ध्यान धारण के उपयुक्त केन्द्र में वे अधिक समय तक निवास नहीं कर पाये । भले ही स्वामी जी ने इस स्थान पर अल्प समय ही बिताया हो पर उनके पावन स्पर्श, स्नेह, और हिमालय में अपने जीवन के अन्तिम दिन व्यतीत करने की इच्छा से उनकी उपस्थिति सदा यहाँ महसूस की जायेगी । उन स्थनों पर नये-नये विचारों की फसल उगेगी और उनकी कल्पना नये रूप धारणा करेगी। इस प्रकार हमने जाना कि किस प्रकार स्वामी जी ने उत्तराखण्ड की यात्रा कर अपने वैश्विक संदेशों का प्रचार-प्रसार किया। उनके संदेशों से हमें खासकर युवा पीढ़ी को सीख लेनी चाहिए। उन्होंने अपने कर्मयोग के फल से भारत ही नही पूरे विश्व को ज्ञान का फल बाँटा आज की युवा पीढ़ी को विश्व में भारतीय तत्वज्ञान और वेदान्त दर्शन का ज्ञान प्रसारित कर वैश्विक नभ में देदीप्यमान उस महापुरूष की ख्याति को आत्मसात करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गौतम घोष 'ए बायोग्राफी ऑफ विवेकानन्द' रूपा पब्लिकेशन इंडिया 2005।
2. रोमां रोलां 'लाइफ ऑफ विवेकानन्द' रामकृष्ण मठ कोलकत्ता, 2018।
3. विवेकानन्द साहित्य, भाग 5 अद्वैत, आश्रम मायावती, चम्पावत, उत्तराखण्ड 2018।
4. मोहन सिंह मनराल 'उत्तराखण्ड में स्वामी विवेकानन्द' अल्मोडा, किताब घर 2015।
5. रमेश पोखरियाल 'निशंक' 'हिमालय मे विवेकानन्द' राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत 2019।
6. गर्टrूड एमरसनसेन'स्वामी विवेकानन्द की अल्मोडा की तीन यात्राएँ' विवेकानन्द कॉर्नर अल्मोडा।
7. हंसराज रहबर 'योद्वा सन्यासी विवेकानन्द' राजपाल एण्ड संस, मदरसा रोड कश्मीरी गेट दिल्ली 2018।
8. स्वामी ब्रहमस्थानन्द 'भारतीय व्याख्यान' रामकृष्ण मठ धन्तोली नागपुर, 2021।
9. शंकर 'विवेकानन्द की आत्मकथा' प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2017।
10. स्वामी निखिलानन्द 'विवेकानन्द एक जीवनी' अद्वैत आश्रम मायावती, चम्पावत, उत्तराखण्ड, 2019।
11. स्वामी अपूर्वानन्द, 'युगप्रवर्तक विवेकानन्द', स्वामी विवेकानन्द शतवार्षिकी कोलकत्ता (1963)।
12. स्वामी विवेकानन्द, 'ज्ञानयोग' रामकृष्णमठ नागपुर (2007)।
13. स्वामी विवेकानन्द, 'शिकागो वक्तृता', रामकृष्णमठ नागपुर (1972)।
14. विवेकानन्द साहित्य, भाग-1, अद्वैत आश्रम मायावती, चम्पावत, उत्तराखण्ड ।
15. विवेकानन्द साहित्य, भाग-4, अद्वैत आश्रम मायावती, चम्पावत, उत्तराखण्ड ।
16. स्वामी विवेकानन्द, ''फ्रॉन कोलम्बो टू अल्मोड़ा: लेक्चर्स', मद्रास प्रकाशन।
17. योगेश्वरानन्द,'दी लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द', अद्वैत आश्रम अल्मोड़ा, 1949।
18. स्वामी विवेकानन्द 'युवकों के प्रति' रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1998।
19. स्वामी तेजसानन्द,'स्वामी विवेकानन्द संक्षिप्त जीवनी', अद्वैत आश्रम मायावती, चम्पावत।
20. पं0 झाबरमल्ल शर्मा, 'खेतड़ी नरेश और विवेकानन्द', साहित्य प्रकाशन दिल्ली, 2013।